पवन प्रवाह
लखनऊ से प्रकाशित राष्ट्रीय हिन्दी साप्ताहिक
website: www.pawanprawah.com
समाचार पत्र पंजीकरण संख्या GPO LW/NP-106/2015-17

चिंता, भय व तनाव से मुक्ति- योग में मुद्रा

लेखक डॉ- भरत राज सिंह
स्कूल ऑफ मैनेजमेंट साइंसेज के महानिदेशक
एवं वैदिक विज्ञान केन्द्र के अध्यक्ष हैं

हमने पिछले 42 (बयालिस) अंको में, चिंता, भय व तनाव की समस्या के निदान हेतु अभी तक यह जानकारी मिली है कि नियमित खान-पान नियंत्रण व योग साधना से नकारात्मकता दूर होती है । योगिग क्रियाये चिंतामुक्त के लिये वैकल्पिक रूप मे उपयोगी हो सकती है । इस अंक मे, हम कुछ और योग बंध के बारे मे अधिक जानकारी हासिल करेंगे तथा इसका वैज्ञानिक पक्ष भी प्रस्तुत किया जायेगा।

भाग-43

गतांक से आगे

13.4 बंधत्रय

पिछले अंक मे हमने बंध के शाब्दिक अर्थ को जानने की कोशिश की जिसे 'गाँठ', बंधन या ताले के रूप मे उदाहरण के रूप मे समझा । यह भी जानकारी मिली कि योगिग अभ्यास से प्राणों को शरीर के किसी एक भाग पर बाँधकर अथवा नियंत्रित कर सफलता पूर्वक कुंडलिनी जाग्रत कर सकता है। अब हम पाँच प्रमुख बंध मे से बंधत्रय और महाबंध के बारे मे विस्तृत जानकारी हासिल करेंगे।

बंध त्रय का अर्थ है तीन बंध या त्रिबंधासन। इस योग में तीन महत्वपूर्ण बंध का समावेश है इसलिए इसे बंध त्रय कहते हैं। ये तीनों बंध हैं- उड्डीयान, जालंधर और मूलबंध। इन तीनों बंधों को एक साथ लगाकर अभ्यास किया जाता है।

बंधत्रय अभ्यास की विधि- किसी भी सुखासन में बैठकर श्वास को बाहर निकालकर फेंफड़ों को खालीकर दें। अब श्वास अंदर लेते हुए हाथों को घुटने पर रखें और जोर देकर मूलबंध करें अर्थात गुदा को ऊपर की ओर खींचते हुए पेट को अंदर की ओर खींचें।

फिर श्वास छोड़ते हुए पेट को जितना संभव हो पीठ से पिचकाएं अर्थात उड्डीयान बंध लगाएं। साथ ही ठोड़ी को कंठ से लगाकर जालंधर बंध भी लगा लें।

सावधानी- उक्त बंध की स्थिति में अपनी क्षमता अनुसार रुकें और फिर कुछ देर आराम करें। इस योग का अभ्यास स्वच्छ व हवायुक्त स्थान पर करना चाहिए। पेट, फेंफड़े, गुदा और गले में किसी भी प्रकार का गंभीर रोग हो तो यह बंध नहीं करें।

इसके लाभ- इससे गले, गुदा, पेशाब, फेंफड़े और पेट संबंधी रोग दूर होते हैं। इसके अभ्यास से दमा, अति अमल्ता, अर्जीण, कब्ज, अपच आदि रोग दूर होते हैं। इससे चेहरे की चमक बढ़ती है। अल्सर कोलाईटिस रोग ठीक होता है और फेफड़े की दूषित वायु निकलने से हृदय की कार्यक्षमता भी बढ़ती है। है।

13.5 महाबंध

गहरा पूरक करें और रेचक पूरी तरह मुख से करें। श्वास बाहर ही रखें। हाथों को घुटनों पर रखें, कंधों को ऊंचा करें और पीठ को सीधा रखते हुए धड़ को थोड़ा-सा आगे करें। जालंधर बन्ध करें और विशुद्धि चक्र पर ध्यान दें। उड्डियान बन्ध करें और मणिपुर चक्र पर ध्यान दें। अंत में मूलबन्ध में आ जायें और मूलाधार चक्र में ध्यान दें। तीन बन्धों को बनाये रखें, जितनी देर तक श्वास आसानी से रोकी जा सके, इस स्थिति में बने रहें। बन्धों को उसी क्रम से खोलें जिस क्रम में उनका प्रयोग किया गया था। गहरा पूरक करें और प्रारम्भिक स्थिति में लौट आयें। सामान्य श्वास के साथ इस स्थिति में कुछ देर के लिए बने रहें।

महाबंध अभ्यास की विधि: प्रथम दायां पांव उठाकर उसकी एड़ी से सीवनी को दृढ़ता से दबाकर गुदा मार्ग को बंद करें। यह मूलबंध की स्थिति है। फिर दायां पांव बाई जांघ पर रखकर गोमुखासन करें और तब ठोड़ी की छाती पर दृढ़ता से लगाकर रखें। यह जालन्धरबंध की स्थिति है। फिर पेट को दबाकर रखें। इससे अपानवायु ऊपर की ओर प्रवाहित होती है। इस समय में ध्यान त्रिकुटी पर लगाकर रखें। इस संपूर्ण स्थिति को महाबंध कहा जाता है।

प्रभाव और लाभ: इसके नियमित अभ्यास से जठराग्नि अधिक बढ़ती है, जिससे पाचन शक्ति उत्तम बनी रहती है। जरा-मृत्यु आदि निकट नहीं आ पाते और साधक योगी बन जाता है।

अवधि और सावधानी: इसे प्रति तीन घंटे पर करें। अभ्यास काल में स्त्री और अग्नि (गर्म पदार्थ आदि) का सेवन न करें।

14.0 जीवन को कैसे सुखमय बनाये

हम आप भली-भाति जानते है कि वातानुकूलित कमरे या रेल के डिब्बे इसलिए बनाये जाते हैं कि उनमें काम या निवास करने वालों पर सर्दी गर्मी का अनावश्यक दबाव न पड़े। उत्तेजना चाहे ऋतु के कारण हो या किसी अन्य के कारण से एक सीमा तक ही सहन होती है। अति की स्थिति में भी किसी प्रकार जिया तो जा सकता है किन्तु उत्साह पूर्वक उतना काम नहीं हो सकता जितना कि होना चाहिए। बेचैनी सदा हैरान ही करती है।

बेचैनी मात्र ऋतु के कारण ही नहीं, अन्य कारणों से भी होती है। तापमान बढ़ने पर ज्वर चढ़ बैठता है और शीत रोग में शरीर का स्वाभाविक ताप घट जाता है। रक्तचाप का अधिक बढ़ना या घटना भी एक विपत्ति है। इसी प्रकार मन पर आवेश का छा जाना अथवा अवसाद के कारण निराश हो जाना ऐसी स्थिति है जिसमें व्यक्ति असन्तुलित हो जाता है। जिसे तनाव भी कहते हैं। तनाव दो प्रकार के होते हैं, एक आवेशजन्य दूसरे अवसादजन्य। क्रोध जैसी स्थिति को आवेश कहते हैं और निराशा, निष्क्रियता को अवसाद। दोनों ही असन्तुलन व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को गड़बड़ा देते हैं और अस्वाभाविक ऐसी स्थिति बना देते हैं जिसमें कुछ सोचते-समझते करते-धरते नहीं बनता। ऐसों की गणना एक प्रकार के मरीजों में होती है जो स्वयं भी हैरान रहते हैं और संपर्क वालों को भी हैरान करते हैं।

सन्तुलन बनाये रहना वातानुकूलित मकान में रहने जैसा है जिसमें अपेक्षाकृत व्यक्ति सुखी और सन्तुष्ट रहता है। प्रसन्नता में काम का अनुपात एवं स्तर भी बढ़ जाता है। संसार की बनावट ऐसी है। परिस्थितियों का क्रम ज्वार-भाटे जैसा चलता है। कभी अनुकूलता आ जाती है तो कभी प्रतिकूलता का सामना करना पड़ता है। ऐसे अवसरों पर हलके, उथले, ओछे, बचकाने लोग उखड़ जाते हैं, पर जो भारी भरकम हैं चट्टान की तरह अपनी जगह पर जमे रहते हैं। वे उतार-चढ़ावों को खिलाड़ी की दृष्टि से देखते रहते हैं जिसमें कभी जीतना कभी हारना पड़ता है।

असन्तुष्ट एक ऐसा रोग है जितना प्रत्यक्षतः तो नहीं दीख पड़ता पर भीतर ही भीतर मरोड़ कर रख देता। यह प्रभाव न केवल स्वास्थ्य पर वरन् क्रिया-कलापों पर भी पड़ता है। वे अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। सोचना और करना यदि मनोयोगपूर्वक न हो तो उसके सही होने की आशा नहीं की जा सकती। जो मन में उद्विग्न है वह आज नहीं तो कल रुग्ण होकर रहेगा।

परिस्थितियाँ सदा अनुकूल ही रहें यह नहीं हो सकता। जब संसार में सर्वत्र परिवर्तन का ही दौर है तो अनुकूलता ही स्थिर रहेगी ऐसी आशा करना व्यर्थ है। यह हो सकता है कि कटीली राह पर चलना पड़े तो जूते का प्रबन्ध करें और तेज धूप पड़ रही हो तो छाता लगा कर चलें। मनःस्थिति गड़बड़ाने से पूर्व हमें ऐसा अभ्यास कर लेना चाहिए कि कुसमय आने पर अपना बचाव हो सके।

प्रथम अभ्यास यह है कि अनुपयुक्त स्थिति के दबाव को कम करने के लिए हम शिथिलीकरण करे । यह साधना अर्धनिद्रा को कम करती है और थकान को घटाती है। यों चिन्ता मुक्ति तो सर्वथा तभी मिलती है जब गहरी नींद आये या मौत इस संसार से उठाये।

हमारे दैनिक व्यायामों, योगाभ्यासों में एक शिथिलीकरण भी सम्मिलित रहना चाहिए। शरीर को शिथिल और मन को उनींदा कर लेने की क्रिया कठिन नहीं है। कोमल बिस्तर पर लेटकर अपने को रुई जैसा हलका या उनींदा अनुभव करने से यह स्थिति कुछ दिन के अभ्यास से बन जाती है कि अपने को संकल्प बल के सहारे अर्ध निद्रित स्थिति में ले जाया जाये। दूसरा अभ्यास यह है कि मन, वचन और शरीर को एक ही काम पर एकाग्र किया जाये। इन तीनों प्रमुख शक्तियों को बिखरने न दिया जाये। एकाग्रता की महिमा सभी बताते हैं और उसके प्रयोग भी सुझाते हैं, पर सबसे सरल और उपयोगी तरीका यह है कि सामने के काम को सबसे महत्वपूर्ण माना जाये और उसे सही रीति से करने को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाया जाये। जो पूरे मन और पूरे श्रम से काम करता है उसकी वाणी भी इधर-उधर की बकवास नहीं करती। शक्तियों को बिखेरने में इधर-उधर की बेतुकी बकवास भी एक बड़ा दुर्गुण है। इसके कारण हर काम अधूरा रह जाता है। भोजन के अथवा पूजा के समय जिस प्रकार मौन रखा जाता है उसी प्रकार अपने हर छोटे-बड़े काम में तत्परता और तन्मयता बरतनी चाहिए और वाचालता पर अंकुश रखाना चाहिए।

कई बार मनुष्य की असहिष्णुता और अतिवादिता भी तिल का ताड़ बनाती है और छोटी-सी कठिनाई हानि या असफलता को राई से पर्वत बनाकर मनुष्य को उद्विग्न कर देती है। उस कुटेव का उपचार यह है कि सदा हँसने-मुसकाने की आदत डाली जाये। मुसकान सबसे बड़ा सौंदर्य प्रसाधन है। इसको अपनाते ही कुरूप भी सुन्दर लगने लगता है। मन का बोझ उतर जाता है। हलकी-फुल्की, हँसती-हँसाती जिन्दगी जीना एक उच्चस्तरीय कलाकारिता है। इसे नित्य प्रति के अभ्यास में सम्मिलित करके अपने को निश्चिन्त निर्द्वन्द्व रहने का आदी बनना चाहिए। उतार-चढ़ावों को कम से कम महत्व देना चाहिए।

कुछ लोग कुविचारों कुकर्मों और मनोरोगों से ग्रसित होते हैं। फलतः उन्हें पग-पग पर असहयोग और अपमान का सामना करना पड़ता है। ऐसे लोगों के लिए उचित है कि सफलता सम्मानित मनुष्यों के गुण, कर्म, स्वभाव की उत्कृष्टता का चिन्तन किया करें और अपने को उसी ढाँचे में ढालने का प्रयत्न किया करें। आत्म सुधार का आत्मनिरीक्षण का क्रम चल पड़ने पर व्यक्तित्व निखरने और सुधरने लगता है। गुण, कर्म, स्वभाव में शालीनता की अभिवृद्धि करते चलने वाला व्यक्ति आमतौर से मनस्वी होता है। सन्तुष्ट रहता और सम्मान पाता है।

कुछ व्यक्ति लोभ मोह में अत्यधिक व्यस्त रहते हैं और ठाट-बाट बनाने की सनक में इतने डूबे रहते हैं कि आत्मिक आवश्यकता और मानवी गरिमाओं और सामयिक कर्तव्यों को एक प्रकार से भुला ही देते हैं। ऐसे लोगों को आत्मा और शरीर की भिन्नता का अभ्यास करना चाहिए।

प्रातःकाल उठते ही एक दिन की जिन्दगी बाल जन्म मिलने की भावना करनी चाहिए और साथ ही सोचना चाहिए कि यह सृष्टा की सर्वोपरि महत्व की कलाकृति उसे किस शर्त पर मिली है जीवन का स्वरूप, लक्ष्य और सदुपयोग क्या है। इसी निष्कर्ष के आधार पर ऐसी दिनचर्या बनानी चाहिए जिसमें शरीर यात्रा के अतिरिक्त आत्मा के उत्कर्ष और लोक-मंगल में प्रवृत्ति की ईश्वरीय इच्छा की पूर्ति होती रहे।

रात को सोने समय निद्रा को मरण का रिहर्सल मानते हुए सोचना चाहिए कि जो भूलें शरीर के साथ पक्षपात और आत्मा के साथ अन्याय के रूप में आज हुई वे भविष्य में न होने पायेंगी। इस संध्या वन्दन का निश्चित प्रभाव यह होता है कि जीवन सम्पदा के दुरुपयोग पर अंकुश लगता और वह प्रयास चल पड़ता है जिससे जीवन को सार्थक बनाया जा सके।

हर दिन किसी सुविधा के समय आत्म निरीक्षण आत्म-सुरक्षा, आत्म-निर्माण और आत्म-विकास के चारों विषयों पर गम्भीर विचार करना चाहिए और भौतिक क्षेत्र में आगे बढ़ने और आत्मिक क्षेत्र में ऊँचा उठने की योजना बनानी चाहिए।

महानता के पक्षधर कार्य इसलिए नहीं हो पाते कि शक्तियों का अधिकाँश भाग असंयम के छिद्रों में होकर बह जाता है और कुछ उत्कृष्ट कर सकने लायक सामर्थ्य ही नहीं बचती। आवश्यक है कि इन्द्रिय संयम, अर्थ संयम, समयसंयम और विचारसंयम पर निरन्तर ध्यान रखा जाये और इस प्रकार बचे हुए वैभव को उन कार्यों में लगाया जाये जिनसे आत्मकल्याण और लोक मंगल के दोनों प्रयोजन सधते हैं। यही जीवन को वातानुकूलित बनाने की प्रक्रिया है।

क्रमशः अगला अँक 44 पढ़ें ।